विद्यार्थी से न्यायाधीश की ओर

कृष्टिका गुन्जियाल*

एक व्यक्ति अपने जीवन काल में अनेक अवस्थाओं से गुजरता है, यह अवस्थायें है बाल्य, किशोर, वयस्क एवं वृद्ध जीवन की ही इन अवस्थाओं में व्यक्ति विभिन्न पात्र निभाता है।

क्रमागत उन्नति से ही मनुष्य ने अपने आप को समाज रुपी ढाँचे में विकसित किया है, वासुदेव कुटुम्बकम जैसी भावना से अपना सकल निर्माण किया है। समाज जिसका हम सभी एक अभिन्न अंग है उसमें अपने द्वारा अर्जित की हुई विद्या से ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। समाज में सदभाव, शान्ति व परस्पर उन्नति के लिए प्राचीन परम्पराओ, प्राकृतिक, नैतिक व सामाजिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए समाज में रह रहे बृद्विजीवियों द्वारा अनेक नियम व कानून बनाये गए हैं। जिनका पालन करना किसी व्यक्ति विशेष के हित में न होकर पूरे समाज के हित में है।

विद्या से मिले ज्ञान का किसी भी व्यक्ति विशेष के जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, विद्या अर्जन के द्वारा ही व्यक्ति अपना व्यक्तिगत एवं सामाजिक कल्याण करता है। जिस काल अवस्था में व्यक्ति विद्या अर्जित करता है प्रायः ही उस काल अवस्था में उसे विद्यार्थी की संज्ञा दी जाती है। एक आदर्श विद्यार्थी की परिभाषा कई जगह परिभाषित हैं परन्तु विद्यार्थी की मूलतः कोई परिभाषा नहीं है। साधारणतः बाल एंव किशोर अवस्था में ज्ञान अर्जन करने वाले व्यक्ति को विद्यार्थी कहा जाता है। जिसका ध्येय स्वाध्याय नियम पालन व्यक्तिगत निर्माण करना होता है। इसी प्रकार न्यायाधीश की कहीं कोई परिभाषित भाषा नही है। जब एक विद्यार्थी अपने द्वारा अर्जित की हुए विद्या का प्रयोग अपने जीवन निर्वाह के लिए करता है तो प्रायः ही उसके विद्यार्थी जीवन का क्रियान्वयन हो जाता है। परन्तु एक व्यक्ति अपने जीवन काल में किसी न किसी रुप में विद्यार्थी ही रहता है।

विद्यार्थी के पथ से न्यायाधीश का पथ निःसदेह अलग है, परन्तु उसका मूल स्वभाव एक ही है। जिस प्रकार एक व्यक्ति अपने विद्यार्थी जीवन में कठिन परिश्रम एवं नियम का पालन कर सफलता अर्जित करता है, उसी प्रकार किसी

* *2nd Addl. Civil Judge(JD), Roorkee, Hardwar*

भी व्यक्ति को किसी भी पथ या पद में सफल होने के लिए उससे जुड़े सभी कर्तव्यों एवं दायित्वों का पूर्ण ईमानदारी एवं निष्ठा से पालन करना चाहिए।

न्यायपालिका समाज का एक अभियोज्य एवं आवश्यक अंग है, जिसके निर्माण का दायित्व उसके सभी सदस्यों पर है। न्यायाधीश होना विद्यार्थी जीवन का विस्तार है। व्यक्ति एवं न्यायाधीश का पद समान होते हुए भी एक दूसरे से पृथक है। व्यक्ति द्वारा किसी भी पद का सदुपयोग कर उस पद को गौरवान्वित किया जाता है, या उस पद का दुरुपयोग किया जाता है। पद से व्यक्ति की गरिमा है, व्यक्ति से पद की गरिमा नहीं। यह बात सदैव स्मरणीय है।

विद्यार्थी से न्यायाधीश बनना विद्यार्थी जीवन की सफलता को दर्शाता है, परन्तु सही मायने में हर न्यायाधीश सदैव एक विद्यार्थी ही रहता है। मूल रुप से न्यायाधीश बनने के बाद सामाजिक दृष्टिकोण से व्यक्ति को सफल देखा जाता है, परन्तु व्यक्ति के न्यायाधीश की परीक्षा में सफल होना तो मात्र एक अन्य पथ की शुरुआत भर है। जिसमें सफल होने के लिए उससे जुड़े सभी कर्तव्य एवं दायित्वों का सम्पूर्ण ईमानदारी एवं कर्तव्यनिष्ठा से निर्वाहन करना आवश्यक है। इसलिये यह कहना गलत न होगा, कि हर विद्यार्थी न्यायाधीश नहीं होता, पर हर न्यायाधीश के अंतःमन में एक अंश विद्यार्थी की अवश्य होता है।

जिस प्रकार कोई व्यक्ति जब अपने विद्यार्थी जीवन की शुरुआत करता है, व विद्यार्थी की संज्ञा लेता है, उसी प्रकार न्यायाधीश की परीक्षा उत्तीर्ण करना न्यायाधीश के पद की संज्ञा प्राप्त करना है। एक सफल न्यायाधीश बनने व न्यायाधीश के पद से न्याय करने के लिए व्यक्ति को निरंतर स्वाध्याय में लीन रहना चाहिए। न्यायाधीश के पद को पाकर, गौरवान्वित होने के पश्चात व्यक्ति को उस पद से जुड़ी गरिमा का सदैव स्मण रखना चाहिए। अपने द्वारा किये गए सभी कृत्यों को उस पद से निर्माण एवं गरिमा को बढ़ाने के लिए करना चाहिए।

एक विद्यार्थी अपने विद्यार्जन काल में अनेक लोभ एवं प्रलोभन से अपने आप को वंचित रखता है, व निरंतर परिश्रम एंव तपस्या से सफलता प्राप्त करता है। एक विद्यार्थी अपने को सामाजिक कुरितियों एंव गलत संगत से दूर रखकर अपने पथ पर निरंतर अग्रसर होता है। विद्यार्थी द्वारा की गई तपस्या की इतिश्री किसी भी परीक्षा के पूर्ण होने से पूर्ण नहीं होती, यह सदैव निरंत चलने वाली प्रक्रिया है जिसका दायरा बढ़ जाता है। प्रायः एक विद्यार्थी का सामाजिक दायरा

अपने साथी विद्यार्थी व गुरुजनों तक सिमित रहता है, विद्यार्थी अपने इसी सामाजिक दायरे में रहकर अपना विद्यार्जन करता है। किसी भी व्यक्ति के सामाजिक दायरे व संग से भी उसका मानसिक स्तर तय हाता है। इसी प्रकार एक न्यायाधीश का सामाजिक दायरा भी अपनी न्यायपालिका व उससे जुडे सभी सदस्यों तक ही सीमित रहना चाहाए।

विद्यार्थी से न्यायाधीश बनना किसी भी व्यक्ति के लिए अत्यंत गरिमामयी है, परन्तु न्यायाधीश की परीक्षा उत्तीर्ण करना एक अन्य पथ की शुरुआत भर है, जिसमें सफलता प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को निंरतर अपने जीवन काल में अनुशासन, कर्मप्रधान व ईमानदार होने की आवश्यकता है। इसलिए यह कहना गलत न होगा कि विद्यार्थी से न्यायाधीश होना विद्यार्थी जीवन का सफल विस्तार है।

****